आत्ममंथन से व्यंग्यमंथन तक

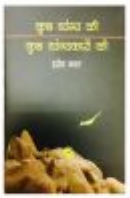

वरिष्ठ व्यंग्यकार हरीश नवल की पुस्तक “कुछ व्यंग्य की कुछ व्यंग्यकारों की ” जब मेरे हाथों में उन्होंने सौंपी, तो कुछ समय के लिए तो मुझे विश्वास ही नहीं हुआ. बस दो पल का आत्मीय मिलन सदियों पुराना बन गया.

यह पुस्तक आत्म मंथन से व्यंग्य मंथन तक का सफ़र तय करती हुई आगे बढ़ती हैं. जिसका अध्ययन करते ही मेरे मन में सिर्फ एक विचार उत्पन्न हुआ- “क्या व्यंग्य की ऐसी कोई दुनिया थी जिसका जिक्र हरीश नवल ने अपनी पुस्तक में किया है. आज की व्यंग्य दुनिया, इस पुस्तक कीदुनिया से मेल नहीं खाती बल्कि एकदम व्यंग्य साहित्य में भिन्न प्रवृत्तियां देखी जा रही है.

कोई कितना भी बड़ा लेखक क्यों ना हो, लेखक वही लिखता है, जो सोचता है. वही सोच उसके व्यवहार में भी दिखाई देती है. वह अपने लेखन और व्यवहार में कभी भी दोहरा रुख अख्तियार नहीं कर सकता. बड़े से बड़ा लेखक चाहे कितनी ही वैचारिक, नैतिक, प्रवचन, उपदेश और भाषाई चालाकीसे अपनी छदमता को छुपा ले. लेकिन उसका व्यवहार उसके लेखन में साफ दिखाई देता है. बस यह महीन दृष्टि विकसित करने की जरूरत होती है.

यही बात हरीश नवल की पुस्तक में साफ-साफ नजर आती है. उनका सौम्य सरल और सहज व्यक्तित्व उनके लेखन, व्यवहार और उनकी भाषा शैली में भी नजर आता है. उनका यही व्यक्तित्व और भाषा शैली मुझे प्रभावित करने से नहीं रोक पाई.

यह पुस्तक ना सिर्फ हरीश नवल की व्यंग्य विकास यात्रा का एक अध्याय है जिसे व्यंग्य विकास यात्रा का एक जरूरी दस्तावेज भी माना जा सकता है. यह पुस्तक अपने युगबोध और दायित्व बोध की दास्तान नजर आती है.

यह पुस्तक ऐसे समय में आई है, जब व्यंग्य -विमर्श के पुराने प्रश्न पुनः व्यंग्य साहित्य के सामने खड़े हो गए हैं और नए प्रश्नों का अंबार लगता जा रहा है. पुस्तक कुछ व्यंग्य-विमर्श संबंधित प्रश्नों को हल करती है तो नये प्रश्नों को जन्म भी देती है. यही इस पुस्तक की कामयाबी भी मानी जा सकती है .

जिस लेखक की 15 सौ से अधिक व्यंग्य रचनाएं प्रकाशित हो, 25 से ऊपर पुस्तकें और आधा दर्जन से अधिक ख्यात पुरस्कार पाने वाला लेखकहरीश नवल यदि आत्ममंथन करते समय यह लिख दे- ‘कहीं मन में है कि अभी कुछ नहीं किया, अभी कुछ नहीं हुआ, कुछ और होना चाहिए.’ यही स्वीकारोक्ति

उन्हें एक बड़ा लेखक बनाती है. यह लिखना कितना कष्टदायक हो सकता है. इसका अंदाजा व्यंग्य जानने- समझने वाले आसानी से समझ सकते है.

यह हरीश नवल की अपनी पीड़ा नहीं है, अपने युग की पीड़ा है, हम सब की पीड़ा है और व्यंग्य साहित्य की पीढ़ा भी नजर आती है. जिसको उन्होंने अपनी पूरी व्यंग्य पक्षधरता के साथ स्वीकार किया है. पुस्तक को पढ़ते समय व्यंग्य साहित्य के इतिहास बोध का होना अति आवश्यक है.

अपने व्यंग्य लेखन के बारे में हरीश नवल बताते हैं कि दसवीं कक्षा में एक व्यंग्य रचना प्रकाशित और सराही जा चुकी थी. यह पुस्तक इस बात का भी खंडन करती है कि व्यंग्य लिखने से पहले व्यंग्य का व्याकरण सीखना जरूरी है. उन्होंने पढ़ते-लिखते व्यंग्य की विसंगतियों को समझना शुरू किया और जब समझना शुरू किया तो सबको जाना- 'नई किताब, नई कहानी, नए उपन्यास, नए नाटक, यहीं से जन्म होता व्यंग्यकार हरीश नवल का, जो आज नई पीढ़ी के लेखन से संतुष्ट नजर आते हैं.

इस पुस्तक के दो भाग हैं. दोनों ही बहुत महत्त्वपूर्ण हैं. दोनों भाग एक दुसरे अलग होते हुए भी, एक दूसरे से इतना जुड़े हुए है कि आप व्यंग्य और हरीश नवल की विकास यात्रा को समझ ही नहीं सकते. यदि पहला भाग हरीश नवल का सैद्धांतिक पक्ष है तो दूसरा व्यवहारिक पक्ष नजर आता है. अर्थात पुस्तक में सिद्धांत और व्यवहार की एकरूपता स्पष्ट नजर आ जाएगी.

हरीश नवल का स्पष्ट मानना है कि "व्यंग्य आलोचना का विशेषकर व्यंग्य शास्त्र का अभाव रहा परन्तु कथ्य और शिल्प के स्तर पर व्यंग्य की धारा अविरल बहती रही है....लेकिन विभिन्न पत्र पत्रिका में व्यंग्य के नाम पर हास्य, विनोद, परिहास, चुटकुला, भाषाजाल, तुकबंदी, त्वरित टिप्पणी आदि प्रकाशित हो रहे हैं. इससे व्यंग्य का महत्व पहले भी घटता रहा है और अब भी घट रहा है. कुछ अपवादों को यदि छोड़ दिया जाए..... इसके बावजूद भीव्यंग्य यात्रा और अन्य पत्रिकाओं ने व्यंग्य विमर्श को स्थान देना शुरू किया है. दुनिया भर में व्यंग्य की दिशाएं बढ़ रही है.

हरीश नवल लिखते है – 'व्यंग्य की मूल प्रवृत्ति बुराई को पहचानने जानने और समाप्त किए जाने के विचार को पैदा करता है.....सामाजिक बदलाव के लिए वैचारिक संघर्ष पुष्पित करता है.....दिशा सूचक ही नहीं दिशा परिवर्तन भी करता है.'

लेखक की रामराज्य और गुरुकुल जैसी अवधारणा से असहमत होते हुए भी उनकी समकालीन विमर्श अवधारणा से सहमत होता हूं. क्योंकि लेखक ने आपने व्यंग्य विमर्श में सकारात्मकता का पहलू बहुत मजबूती के साथ रखा है.

हरीश नवल व्यंग्य के स्वरूप पर अपनी चिंता प्रकट करते है. व्यंग्य की शाश्वतता का प्रश्न उनकी नजरों में आज भी बना हुआ है. उनका मानना है कि व्यंग के स्वरूप का निर्धारण बहुत सावधानी से करना पड़ेगा.

लेखक के व्यंग्य- विमर्श सम्बन्धी आलेखों का अध्ययन करते हुए यही महसूस हो रहा है कि आज हमें अपने युगबोध से दायित्व का निर्धारण और दिशा बोध का निर्माण भी करना पड़ेगा . जो काम अभी

बाकी है . लेखक ने भी अपने समय का मूल्यांकन कने का प्रयास किया है . उनकी नजर में नजर में साठोत्तर व्यंग्य साहित्य हिंदी –व्यंग्य का एक स्वर्णिम युग है.उस समय के सभी व्यंग्यकार अपने युगबोध का कार्य करते रहे. आज भी व्यंग्य का दायरा बढ़ रहा है .

हरीश नवल एक स्थान पर लिखते है- 'व्यंग्य एक सोद्देश्य प्रक्रिया है और बिना सामाजिक सरोकार के कोई व्यंग्य नहीं होता है.' प्राय देखा जाता है जब विमर्श की बात होती है तो सिर्फ अपने विषय क्षेत्र तक ही विमर्श को सीमित कर दिया जाता है लेकिन हरीश नवल ने न सिर्फ गद्य व्यंग्यकी बात करी बल्कि आपने समय और प्राचीन पद्य व्यंग्यकारों की रचनाओं के योगदान का भी उल्लेख करना नहीं भूले हैं. इस विषय में गालिब और दुष्यंत कुमार की गजलों वाला एक उम्दा आलेख पढ़ने को मिला. 'अंधेर नगरी' और 'बकरी' नाटक पर लिखा गया उनका आलेख दो युगों की अवधारणाओं की प्रासंगिकता को स्पष्ट करने वाली विचारात्मक सामग्री भी पाठकों के लिए मौजूद है.

युवा व्यंग्यकारों के नाम खुला पत्र एक बहुत ही मार्मिक, कटु और यथार्थवादी वक्तव्य है जिसने युवा व्यंग्यकारों की दशा और दिशा की तरफ इशारा किया है. यह पत्र अपने आप में ऐतिहासिक पत्र का दर्जा प्राप्त कर चूका है जिसमें उन्होंने नये व्यंग्यकारों को संबोधित किया- " हमने एक चुक की-एक परसाई स्कूल बना दिया और जोशी स्कूल , कुछ ने शुक्ल और कुछ ने त्यागी स्कूलों की प्रबंध –समितियां निर्मित कर लीं. यह सही नहीं था . तुम ज्ञान, प्रेम या नवल या हरि स्कूलों में एडमीशन न लेना. तुम सशक्त हो, तुम्हारी अपनी निजता है, प्रतिभा को कॉपीकैट नहीं बनाना, नकल से असल हमेशा बेहतर होती है. समझ रहे हो न वत्स ? नहीं नहीं 'यंग फ्रेंड'.

व्यंग्य विमर्श आज बहुत ही ऊँचे पायदान पर पहुंच गया, जिसका श्रेय हरीश नवल व्यंग्य यात्रा और प्रेम जन्मेजय को देते है. उन्होंने 'परसाई अंक के बहाने व्यंग्य यात्रा' आलेख के बहाने 'व्यंग्य-यात्रा' का बहुत बेहतरीन मूल्यांकन किया है.

जब प्रेम जन्मेजय और हरीश नवल व्यंग्य यात्रा और अपने चिंतन से व्यंग्य को विधा बनाने की कोशिश कर रहे थे उसी समय परसाई का पत्र हरीश नवल के नाम आता है. जिसमें परसाई साफ-साफ लिखते है- व्यंग्य विधा नहीं स्प्रिट है. सैद्धांतिक मतभेद होते हुए भी हरीश नवल को उनका सान्निध्य मिलता रहा. जिसे आज भी हरीश नवलबदुई सिद्धत से मानते है. हरीश नवल परसाई के बारे में लिखते है – 'आज भी हिंदी साहित्य के मस्तिष्क पर परसाई का ही राज चलता है.

ऐसा नहीं था की हरीश नवल ने परसाई जोशी और त्यागी जो जो मान-सम्मान दिया और किसी को नहीं दिया. उन्होंने अपने समय के सभी रचनाकारों से जुड़े संस्मरण, संवाद, विचार इत्यादि पर बहुत कुछ लिखा है. जिसमें श्रीलाल शुक्ल, गोपालप्रसाद व्यास, के.पी सक्सेना, शंकर पुताम्बेकर,नरेंद्र कोहली, सुदर्शन मजीठिया, शेरजंग गर्ग, मनोहर श्याम जोशी, गोपाल चतुर्वेदी, ज्ञान चतुर्वेदी, प्रेम जन्मेजय, बालेन्दु शेखर तिवारी, गिरिराजशरण अग्रवाल, सूर्यबाला , कृष्णकान्त, मनोहर लालइत्यादि पर आत्मीय संस्मरण लिखे हैं. जिसको पड़कर लगता है कितनी सुन्दर दुनिया थी व्यंग्य की. शायद उसको किसी कि नजर लग गयी है. सम्पूर्ण पुस्तक व्यंग्य का एक ऐसा दस्तावेज है. जो आत्ममंथन से व्यंग्य मंथन तक का सफ़र करती है. यह पुस्तक व्यंग्य परम्परा से सकारात्मक जुड़ाव पैदा करने का

काम करती है. इसके लिए हरीश नवल बधाई के पात्र है.

पुस्तक : कुछ व्यंग्य की कुछ व्यंग्यकारों की
लेखक :हरीश नवल
प्रकाशन :हिंदी साहित्य निकेतन
मूल्य :300